IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्राचीन भारत में संस्कार एक अध्ययन

1Pratibha Trivedi, 2Dr.vimlendu singh

1Research scholar, 2Assistant Professor

1Major.s.d.singh university,

2Major s.d.singh university

सारांश :

प्राचीन भारत की सांस्कृतिक विरासत धार्मिक परंपराओं, नैतिक मूल्यों और जीवन–चक्र से जुड़ी विधियों पर आधारित रही है। इन परंपराओं में संस्कारों का विशेष महत्व रहा है, जो व्यक्ति के जीवन के विभिन्न चरणों को चिह्नित करते हैं और उसे सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से परिपक्व बनाते हैं।

यह अध्ययन विशेष रूप से नामकरण संस्कार, उपनयन संस्कार तथा विवाह संस्कार जैसे प्रमुख संस्कारों पर केंद्रित है, जो न केवल जीवन के परिवर्तनशील क्षणों का प्रतीक हैं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्वों को भी पुष्ट करते हैं।

इस शोध में गृह्यसूत्रों, धर्मशास्त्रों और स्मृति ग्रंथों के माध्यम से इन संस्कारों की उत्पत्ति, उद्देश्य और उनके सामाजिक महत्व का विश्लेषण किया गया है। साथ ही यह अध्ययन आधुनिक संदर्भ में इन संस्कारों की प्रासंगिकता और उनके परिवर्तित स्वरूप को भी उजागर करता है।

मुख्य शब्द : प्राचीन भारत, संस्कार, नामकरण संस्कार, उपनयन संस्कार, विवाह संस्कार, वैदिक

संस्कृति, धर्मशास्त्र, सामाजिक सरं चना, जीवन–चक्र, हिन्दू परंपराएं।

प्रस्तावना :

प्राचीन भारत की सांस्कृतिक विरासत अत्यंत संमद्ध एवं बहुआयामी रही है, जिसमें संस्कारों की परंपरा का विशेष स्थान रहा है। 'संस्कार' शब्द का अर्थ है– शुद्धिकरण, परिष्करण या मानसिक एवं आत्मिक उन्नयन। ये संस्कार न केवल व्यक्ति के जीवन को एक दिशा प्रदान करते हैं, अपितु समाज के नैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को भी संरक्षित रखते हैं।

वैदिक काल से ही मानव जीवन को विभिन्न चरणों में विभाजित कर प्रत्येक चरण हेतु विशिष्ट संस्कारों की परिकल्पना की गई थी। गर्भाधान से लेकर अंतिम संस्कार तक कुल सोलह प्रमुख संस्कारों का वर्णन धर्मशास्त्रों, गृह्यसूत्रों एवं स्मृतियों में मिलता है। इन संस्कारों का उद्देश्य व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास को सुनिश्चित करना था।

प्राचीन भारत में संस्कार केवल धार्मिक कृत्य नहीं थे, बल्कि ये सामाजिक अनुशासन, पारिवारिक उत्तरदायित्व एवं नैतिक आचरण के प्रतीक थे। इनकी महत्ता आज भी भारतीय समाज में विद्यमान है, यद्यपि उनके स्वरूप एवं प्रचलन में समयानुसार परिवर्तन हुआ है।

इस अध्ययन का उद्देश्य प्राचीन भारतीय संस्कारों की ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण करना है, ताकि यह समझा जा सके कि इन संस्कारों ने भारतीय समाज की संरचना एवं जीवन दृष्टिकोण को किस प्रकार प्रभावित किया। साथ ही, यह शोध आधुनिक संदर्भ में इन संस्कारों की प्रासंगिकता को भी उजागर करने का प्रयास करेगा।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ये न शरीर मन आत्मा चोत्तमा भवन्ति सःसंस्कारः इत्युच्यते।

वैदिक साहित्य, गृहासत्रों, स्मृति साहित्य, इत्यादि में संस्कारों के बारे में विशेष चर्चा की गई है।

ऋग्वेद—गर्भाधान, पुसवन, विवाह तथा अन्त्येष्टि ।

अर्थर्ववेद गर्भाधान, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह तथा अन्त्येष्टि। गौतम धर्म सूत्र में आठ आत्मगुण सहित चालीस संस्कार माने गए है।

महाभारत मे तेरह गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातधर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्रासन, चूर्णकर्म उपनयन, विवाह, गादोन, उपाकर्म, अन्त्येष्टि। स्वामी दयानन्द सरस्वती सोलह संस्कारों को मान्यत देते हैं। व्यास स्मृति में भी सोलह संस्कार मान्य किये गये हैं।

भारतीय साहित्य में संस्कारों की संख्या के विषय में विभिन्न मत है किन्तु सर्वस्वीकृत सोलह संस्कार निम्न है–

1. गर्भाधान
2. पुंसवन
3. सीमान्तोनयन
4. जातकर्म
5. नामकरण
6. निष्क्रमण
7. अन्नप्रशान
8. चूडाकर्म
9. कर्णवेध
10. उपनयन
11. समावर्तन
12. विवाह
13. हस्थ
14. वानप्रस्थ
15. संयास
16. अन्त्येष्टि संस्कार

इन सोलह संस्कारों को चार भागो में विभक्त कर सकते है–

1. जन्मपूर्व के संस्कार– गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन।

शैषव संस्कार– जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्र"ाान, चूड़ाकम (मुण्डन), कर्णवेध।

2. शैक्षणिक संस्कार– उपनयन व समावर्तन।

3. गृहस्थ संस्कार– विवाह, गहृ स्थ, वानप्रस्थ, सन्यास, अन्त्येश्टि।

जन्मपूर्व के तथा शै"ाव संस्कारों का दायित्व माता–पिता का है जब कि शैक्षणिक संस्कारों का

माता–पिता की अनुमति के गुरू का दायित्व है।

गृहस्थ संस्कारों में प्रथम ग्रहस्थी का दायित्व व्यक्ति का स्वंय का है, जबकि अन्तयेष्टि का दायित्व पुत्र–पोत्रों और निकटस्थ स्वजनों का है।

1. गर्भाधान संस्कार– भारतीय संस्कृति में गृहस्थाश्रम का अधिक महत्व है गर्भ में शिशु की बीज रूप में प्रतिष्ठा होना ही ग्रर्भाधान संस्कार है, संस्कारविधि गर्भाधान प्रकरण में कहा है कि– गर्भास्याध्यानं वीर्यस्थापनं स्थिरीकरणं यस्मिन्येन वा कर्मणा तद् गर्भाधानम्।

स्त्री और पुरुष के आद"ा विवाह के बाद ही गर्भाधान होना चाहिए। वेद का गर्भाधान प्रकरण प्रजननशास्त्र के बहुत ही सूक्ष्म नियमों का उपदे"ा करता है। वेद में विवाह प्रकरण में र्भाधानसंस्कार के लिए वेद आज्ञा देता है कि, 'हे वधू ! प्रसन्नचित होकर इस पर्यक पर चढ़ और अपने पति के लिए संतान को उत्पन्न कर तथा इन्द्राणी की भांति हे सौभाग्यवती बुद्धिमानी से सूर्य निकलने के पहले उषःकाल में जागना। विद्वान लागे पहले भी अपनी पत्नियों को प्रज्ञरत हुए है और अपने शरीरों को उनके शरीरों से अच्छी तरह मिलाया है। आगे के मंत्रों में आलिगनं, प्रसन्नपूर्वक पत्नी का कार्य में सम्मिलित होना, समागम के समय रखने वाली सावधानियों, समागम की आसान पद्धतियों तथा आरोग्यरक्षा के लिए स्नानादि से निवर्त होने का वर्णन किया गया है।

2. पुंसवन संस्कार– गर्भाधान के बाद पुंसवन संस्कार किया जाता है पुंसवन संस्कार का मुख्य उददे"य गर्भस्थ को f"ा"ाु बनाना है। यह कार्य एक औषधि के द्वारा किया जाता हे वेद में लिखा है कि, 'जिस शमी वृक्ष पर उगे हो, उसकी जड़ को गर्भाधान के दिन से दो–तीन मास तक स्त्री को देने से पुत्र की प्राप्ति होती है जो वीर्य स्त्री में डाला जाता है पुंसत्व को प्राप्त हो जाता है और पुत्र की प्राप्ति होती है यह बात प्रजापति परमात्मा ने कहीं हैं।

3. सीमन्तोन्नयन संस्कार– पुंसवन संस्कार के आगे सीमन्तोन्नयन संस्कार होता है वह गर्भ चार पांच महीने का हो जाता है तब मस्तिष्क उत्पन्न होता है और बुद्धि जागव्र होती है इसी को सीमान्त उन्नयन अर्थात् f"ार की उन्नति कहते है। सिर के विषय में वेद में लिखा है कि ज्ञान का केन्द्र सिर है जो दवेताओं को सुरक्षित को"ा है। इस को"ा की प्राण, मन, और अन्न रक्षा करते हैं। ऐसे ज्ञानको"ा सिर की वृद्धि के समय गर्भिणी को चाहिए कि वह वीरों की कथाएं सुने, उत्तम चित्रों को देखें और उत्तम कर्मों को अनुष्ठान करे, जिससे गर्भस्थ का मस्तिष्क उत्तम संस्कारों से सुसंस्कृत हो जाऐ।

4. जातकर्म संस्कार– सीमन्तोन्नयन संस्कार के बाद का संस्कार जातकर्म संस्कार है यह संस्कार बाल के उत्पन्न होने पर किया जाता है मनुस्मृति में विधान है कि नालछेदन से पहले पुरुष का जातकर्म करना चाहिए। जिस समय बालक उत्पन्न होने लगता है, उस समय की प्रार्थना का वर्णन वेद में इस प्रकार किया गया है, जिस प्रकार हवा से छोटा तड़ाग सब ओर से हिलने लगता है, वैसे ही द"ा मास में तेरा गर्भ हिले और बच्चा बाहर आये। जिस तरह हवा वन और समुद्र हिलते है, वैसे ही बालक तू जरायु से सहित आ जाती हुई माता के जीवन पर जीने वाला हे जीव ! तू माता के गर्भ द"ा महीने सोकर अक्षत निकल।

5. नामकरण संस्कार– नामलिखस्य व्यवहारकेतुः षुभावहं कर्मसु भाग्यहेतुः। नाम्नैव कीर्ति लभते मनुष्यस्ततः प्रषस्तं खलुः नामकर्म।।

नाम का बड़ा महत्व है नाम व्यक्ति की पहचान बनाता है इसीलिए f"k"kq का नामकरण धार्मिक विधि से करना चाहिए। जातकर्म के आगे नामकरण संस्कार है। मनुस्मृति में कहा गया है कि बालक का नाम द"ामी और द्वाद"ाी या पवित्र तिथि को या पवित्र मुहुर्त में या ज्योतिष शास्त्र से निf"चत गुणयुक्त नक्षत्र मे या फिर अ"ाौचनिवृत्ति हो जाए तब रखना चाहिए।

ऋग्वदे के एक मंत्रं में नामकरण संस्कार की f"k्षा देते हुए कहा है। तू कौन है, तेरा नाम क्या है। तू बड़े नामवाला हो और पृथ्वी से लेकर अंतरिक्ष और द्यौतक पूजा और पोषण के साथ बढ़। नामकरण संस्कार का तात्पर्य बच्चे के नाम से हैं नाम का मनुष्य पर बहुत बड़ा असर होता है। उत्तम, सार्थक और उच्चभाव का बोध कराने वाला नाम नामी को हर समय अपने नाम की सूचना देकर उसे अनके दुव्यर्वहारों से बचाता है और उच्च बनने की प्रेरणा करता है। इसलिए वेद ने इस संस्कार की आज्ञा दी है।

6. निष्क्रमण संस्कार– नामकरण संस्कार के आगे निष्क्रमण संस्कार है बालक नौ महीने तक गर्भ में रहने के बाद वातावरण में अकस्मात निकलना f"k"kq के लिए गंभीर हो सकता है। इसलिए शुभ नक्षत्र मुहूर्त में उसे बाहर ले जाया जाता है। इसी संस्कार के द्वारा बालक को घर से बाहर लाया जाता है और पहले पहले संसार से परिचय होता है। इसके संबंध में वेद उपदे"ा करते है कि हे बालक ! तेरे लिए यह द्यौ और पृथ्वीलोक, दुख न देने वाले, कल्याणकारी और शोभा तथा ए"वर्य को देने वाले हो। यह सूर्य तेरे लिए प्रका"ा देने वाला हो, वायु तेरे हृदय शांत करने वाला हो और जल तेरे लिए सुन्दर स्वादवाला होकर बहे। तुझे भीतर से बाहर इसलिए लाया हूँ कि तेरे लिए औषधियां कल्याणकारी हो और सूर्यचन्द्र दोनों तेरी रक्षा करों 12 यहाँ निष्क्रमण के दो मतलब है– एक तो बालक को पदार्थों का परिचय करना और दूसरा शीतोष्ण सहने का अभ्यास करना। इसलिए यह संस्कार आव"यक माना जाता है मनुस्मृति में निष्क्रमण संस्कार बालक के जन्म से चौथे महीने में करने का विधान है।

7. मुण्डन संस्कार (चूड़ाकर्म)– अन्नप्रा"ान के आगे मुण्डन संस्कार है बालक का पहली बार बाल काटकर f"k्षा रखी जाती है उसे चूड़ाकर्म–मुण्डन संस्कार कहते हैं। यह संस्कार वैदिक समय में आज पर्यन्त प्रचलित है। अथर्ववेद के मंत्र कहा गया है कि इससे बालक धनवान और प्रजावान होता है। उसी मंत्रं में बालक की हजामत का तरीका भी बतलाया गया है। वेद में इस संस्कार के लिए आज्ञा है कि, जिस प्रकार छुरे से सोम और वरूण का क्षौर सविता का विद्वान करता है उसी तरह ब्राह्मण को चाहिए कि वह बालक का मुण्डन करे जिससे वह धनवान और प्रजावान हो। जिस तरह सामे पर सूर्य अपना संचार करता है, उसी तरह बालक की ठण्डी खोपड़ी पर गर्म जल डालकर हजामत की जाए।

यह मुण्डन संस्कार गर्भ के अपवित्र बालों को काटने के लिए किया जाता है जिससे शुद्धता आये और आरोग्यता बढ़े f"k"kq का चूड़ाकर्म संस्कार जन्म के तृतीय वर्ष में करने का अधिकतर ग्रंथों में निर्दे"k मिलते हैं। यह संस्कार उत्तरायण में शुल्क पक्ष के अवसर पर किया जाना चाहिए।

8. कर्णवध संस्कार— मुण्डन संस्कार के आगे कर्णवेध संस्कार की आव"यकता बतलाई गई है।

इस संस्कार में f"k"kq के कानों को छेदे जाते हैं अथर्ववेद में कहा गया है कि दोनों कानों में अf"वनी देवताओं ने पहले ही चिन्ह किया है उसी चिन्ह पर लोहे के शस्त्र के है वैद्यो ! बहुत सी प्रजा देने वाले छिद्र को कीजिए। इस संस्कार का वार, नक्षत्र, समय भी आचार्यो ने निf"चत किया है छह महीने से पांच वर्ष तक के बीच में सह संस्कार करना उचित है।

स्वास्थ्य, संरक्षण एवं सौन्दर्य की दृष्टि से सुश्रुत की मान्यता है कि कर्णवेध से अण्डवृद्धि की बीमारी नहीं होती और इसी से आरोग्यता के लिए सुवर्ण पहिनने का काम भी निकल जाता है। अब यह संस्कार केवल बालिकाओं के ही होते है।

9. उपनयन संस्कार— गर्भाधान से कर्णवेध तक के इन छोटे—बड़े किन्तु महत्वपूर्ण संस्कारों के बाद बालक का उपनयन संस्कार होता है। बालक को आचार्य द्वारा ब्रह्मविद्या की f"k{kk देने के लिए स्वीकार करने की विधि को उपनयन संस्कार कहते हैं। इस संस्कार के बाद ब्रह्मचर्याश्रम का प्रारंभ होता है इस संस्कार के उल्लेख वैदिक साहित्य में मिलते हैं। उपनयन संस्कार से बालक की शरीर वृद्धि तथा वेद वेदांग के अध्ययन से गुणयुक्त बालक का यह द्वितीय जन्म कहा जाता है।

अथर्ववेद में उपनयन संस्कार का वर्णन करते हुए कहा है कि आचार्य आये हुए ब्रह्मचारी को अपने समीप गर्भ की भांति तीन दिन तक रखता है और सब लागे उस ब्रह्मचारी को देखने के लिए आते है उसकी पहली समिधा, पृथ्वी, दूसरी अंतरिक्ष और तीसरी द्यौ के लिए होती है। वह समिधा से मेखला से, श्रम से और तप से तीनों लोक को पालता है।

10. समावर्तन संस्कार— सम्यक् आवर्तनं समावर्तनम्। उपनयन संस्कार के बाद मनुष्य उत्कृष्ट गुणों को पाकर ही समाज में मिलने के योग्य होता है। इसी मिलाप का नाम समावर्तन संस्कार है। समावर्तन संस्कार की बड़ी महिमा है क्योकिं यहीं समाज का मूल है। इस संस्कार का महत्व प्रतिपादित करते हुए वेद में कहा गया है कि जो ब्रह्मचारी समुद्र के समान गंभीर होकर और उत्तम व्रत ब्रह्मचर्य में निवास करके महातप को धारण करता है और वेदपठन, वीर्यनिग्रह तथा आचार्य के प्रिय चरिणादि सेवा करके कमी को पूरा करके और समावर्तन से स्नातविधि को करके उत्तम गुण, कर्म, स्वभावों से प्रकाf"kत होता है, वहीं धन्यवाद के योग्य होता है।

समावर्तन संस्कार के बाद खाना वे"kभूषा इत्यादि बदल जाते है। समावर्तन संस्कार आज भी वि"वविद्यालयों में 'दीक्षान्त समारोह' के रूप में विद्यमान है।

11. विवाह संस्कार– समस्त संस्कारों का मलू विवाह है धर्म, अर्थ, काम की सिद्धि का साधन विवाह संस्कार है। 'शब्द कल्पद्रुम' कहा गया है, 'विवाह वैं"िष्टं वहनम्'। संतानोत्पत्ति, वर्णाश्रम धर्मपालन आदि उद्दे"यों की पूर्ति के लिए स्त्री पुरुष का संबंध विवाह संस्कार है। विवाह करने वाले वर–वधू की क्या योग्यता हो ? उनकी आयु क्या हो और उनका क्या कर्तव्य है ये बाते संस्कारों के आरंभ के पूर्व विवाहकाल में ही स्थिर हो जानी चाहिए।

ऋग्वदे में कहा गया है कि पहला पति सामे है, दसू रा गन्धर्व, तीसरा अग्नि है और चौथा मनुष्य है इसमें विवाह के समय कन्याओं की आयु का उपदे"ा दिया गया है। वर की आयु को बतलाते हुए कहा है कि जो युवावस्था को प्राप्त होकर विद्या पढ़कर और यज्ञोपवीत तथा सुन्दर वस्त्रों को पहने हुआ होना चाहिए। अतः विवाह के समय पुरुष भी युवा होना चाहिए। वर–वधू की परस्पर वैवाहिक प्रतिज्ञाओं को वेदमंत्र में बहुत अच्छी तरह द"ार्ाया गया है। विवाह के समय वर प्रतिज्ञा करता है कि ''भगं, अर्यमा, सविता और पुरन्धि आदि दवेताओं ने मुझको गार्हपत्य के लिए तुझे दिया है अतएव में सौभाग्य के लिए तेरा हाथ पकड़ता हूँ। साथ–साथ वर अपनी पत्नी को वृद्धावस्थापर्यन्त साथ रहने का वचन देता है और उसे धर्म से पत्नी स्वीकार करती है। वर की प्रतिज्ञा पर वधू भी प्रतिज्ञा करती है, कि मैं तुझे अपने वस्त्र से बांधती हूँ जिससे तू मेरा ही रहे और दूसरी स्त्रियों की बात कभी न करे।

13. गृहस्थ संस्कार– गृहस्थाश्रम का वर्णन वेदों में पर्याप्त है वेदमंत्रों के अनुसार ग्रहस्थ की हालत कैसी होनी चाहिए। उसके बारे में ऋग्वदे में लिखा है कि, किसी से विरोध न करो, गृहस्थाश्रम में रहो, पूर्ण आयु प्राप्त करो, पुत्र और पीत्रों के साथ खेलते हुए और आनन्द करते हुए अपने घर को आद"ा रूप बनाओ।

आगे दपंत्ति का परस्पर आद"ा कैसा होना चाहिए। उसके बारे में ऋग्वेद में कहा गया है, कि, संसार प्राण"ाक्ति धारण शक्ति और उपदे"ा "ाक्ति परस्पर कल्याणकारी हो।

यह वैदिक दम्पति का आद"ा है ।

14. वानप्रस्थ संस्कार– गृहस्थाश्रम संस्कार के आगे परलाके से संबंध रखने वाले तीन संस्कार और है– वानप्रस्थ, संयास और अंत्येष्टि संस्कार इन तीन संस्कार बिना मनुष्य सफल नहीं होता।

वानप्रस्थाश्रम, के विषय में ऋग्वदे के अरण्यानी सूक्त में लिखा है कि 'इस वानप्रस्थी को जंगल में कोई नहीं मारता और न कोई उसके पास आता हैं । वह स्वादिष्ट फलों को खाकर सुख से जहाँ इच्छा होती है, वहाँ विचरण करता है। तथा अथर्ववेद में भी गृहस्थ को वानप्रस्थी होने के लिए प्रेरित किया गया है।

15. सन्यास संस्कार– वानप्रस्थ संस्कार से आगे सन्यास संस्कार है वैदिक सन्यासी दवे कहलाते थे और वे संसार से विरक्त होकर समाधि द्वारा परमात्मा के द"ान प्रयत्न किया करते थे। वेद में लिखा है कि ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाध्नत अर्थात ब्रह्मचर्य और तप से ही समस्त दवे मोक्ष प्राप्त करते हैं। गृहस्थाश्रम को छोड़कर वेदों मे प्रवे"ा करने के लिए तैयार होना, यहीं सन्यास धारण करने का संस्कार है।

16. अन्त्येष्टि संस्कार– इस संस्कार के बाद कोई संस्कार नहीं होता। संयास संस्कार से आगे अंतिम संस्कार अन्त्येष्टि संस्कार है। वेद में अन्त्येष्टि संस्कार की बड़ी महिमा है। ऋग्वेद में लिखा है कि 'चक्षु सूर्य में जावें, प्राण वायु में जावें, पृथ्वी का अं"ा पृथ्वी में जावें, जल का अं"ा जल में जावें और औषधियों का अं"ा औषधियों में जायें।

आज भी व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर अपने धर्म एवं सम्प्रदाय के अनुसार अन्त्येष्टि संस्कार किया जाता है। इस प्रकार से पैदा होने के पूर्व से लेकर मरने के बाद तक के संस्कारों का वर्णन वेदों में है।

17. समापन– वेदों में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त के संस्कारों का वर्णन है मनुस्मृति में इन संस्कारों का महत्व प्रद"िात करते हुए भगवान मनु ने कहा है कि वेद में वर्णित श्रेष्ठ मंत्र विधियों से द्विजाति को परलोक और आलोक में पवित्र करते हुए अर्थात् पापना"ाक गर्भाधान आदि शरीर के संस्कार करना द्विजातियों का कर्तव्य है। यह कर्म परलोक में पवित्र करते है संस्कारयुक्त मनुष्यों को वेद ही वेद पढ़ने का अधिकार है और इन संस्कारों से ही मनुष्य द्विज कहलाता है।

'जन्मना जायते षूद्रः संस्कारारत् द्विज उच्यते।'

इस प्रकार सोलह संस्कारों को हम चार भाग में विभक्त कर सकते है–

1. जन्मपूर्व के संस्कार

2. शै"ाव संस्कार

3. शैक्षणिक संस्कार

4. गृहस्थ संस्कार

यह सौलह संस्कारों में गर्भाधान, वानप्रस्थ, सन्यासादि संस्कार लुप्तप्राय है। वैद्यकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण दो संस्कार ने स्थान लिया पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन। उपनयन संस्कार केवल यज्ञोपवीत धारण करना और विद्यालय ि"ाक्षा से इसका संबंध जुड़ गया है।

समावर्तन वि"वविद्यालयों में दीक्षान्तसमारोह में परिणत हो गया है।

सन्दर्भ–

1. वामन ि"ावराम आप्टे, संस्कृत–हिन्दी को"ा पृ0 1083

2. चत्वारि"ात् संस्काराः अष्टौ आत्मगुणाः गौतम धर्मसूत्र 8/14–24

3. गर्भाद्या मृत्युपर्यन्ताः संस्काराः 'ोड"ाव हिं। वक्ष्यन्ते तं नमस्कृत्यनन्तविद्यं परमे"वरम्। संस्कारविधिः

ग्रन्थारम्भ, लाके –2

4. व्यासस्मृति, 1, 13–15

5. अथर्ववेद, 14/1/58, 14/2–31, 32, 38, 39

6. शमीमृवत्थ आरूढस् तत्र पुंसवन कर्तम .....।।, अथर्ववेद 6/11/1

7. तद्वा अथर्वणः ि"ारो दवे को"ाः समुब्जितः .....।। अथर्ववेद 10/2/27

8. प्रास्नाविभवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधियते.....।। मनुस्मति 2/29

9. यथा वातः पुष्कारिणी समिड़गयति सर्वतः एवा ते गर्भ एजतु निरैतु द"ामास्यः ।।7।।

10. नामधेय द"ाम्यां तु द्वाद"यां वास्स्य कारयेत्....।। मनुस्मृति 2/30

11. कोसि कतमोसि कस्यामि को नामामि .....।। यजुर्वेद 7/29

12. ि"ावे से स्तां द्यावापृथ्वी असंतापे अभिश्रिया ......।। अथर्ववेद 8/2/14–15

13. चतुर्थे मासिक कर्तव्य ि"ा"ाोनिष्क्रामण ग हात् ....।। मनुस्मृति 1/34

14. 'ाष्टअेन्नप्रासन मासिक यद्वेष्टं मंगल कुल। अेजन 2/34

15. येनावपत्सविता क्षुरेण सामे स्य राज्ञो वरूणस्य विद्वान.....।। अथर्ववेद 6/68/3

16. लोहितने स्वधितिना मिथुनं कर्णयोः कुथि। अकर्तामि"चना लक्ष्म तदस्तु प्रजया बहु।। अथर्ववेद 6/141/2

17. पारस्कराह्मसत्र 2/11, कात्यायन गृहासूत्र 1/2 18ए रक्षा भूषणनिमित बालस्य कर्णौ विध्यते। खड़गापे रि च कर्णान्ते त्यक्त्वा यत्नने सेवनीम्। व्यत्यासाद्वा ि"ारां विध्यदे न्त्रवद्धिनिवतये। सुश्रुत, शरीरस्थान, 16/1

19. आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कूणुते गर्भमन्त.....।।

20. ऋग्वदे 3/8/4, यजुर्वेद 16–17, अथर्ववेद, 11/5/3 तथा 19/19/8 कठोपनिषद 1/9

21. तानि कल्पद ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोअतिष्ठतप्यमानः ....।। अथर्ववेद 114/26

22. गृहणामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः अथर्ववेद, 14/1/40 भगस्ते हस्तमग्रहीत।। अथर्ववेद 14/1/41

23. अभित्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा ....।। अथर्ववेद 7/37/1

24. इहैव स्तं मा वि चौष्टं वि"वमायुर्व्य"नुतम् ....।। अेजन 10/84/42

25. समंजन्तु वि"वे देवाः समापों हृदयानि नौ .....। 10/84/47

26. ऋग्वदे, 10/146/5

27. अथर्ववेद, 9/5/1, 11/41/1

28. ऋग्वदे, 10 ⁄ 16 ⁄ 3

29. आपस्तंब धर्मसत्रू – अनुवादरूः डॉ. सत्यव्रत शर्मा

30. (प्राचीन वैदिक काल में संस्कारों का उल्लखे ा)

31. मनुस्मृति– भाष्यकाररूः डॉ. राजेन्द्रलाल मित्र

32. (संस्कारों का नैतिक एवं सामाजिक आधार)

33. Kane, P.V. – History of Dharmasastra (Vol. I-V) (Comprehensive study on ancient Indian rituals and customs)

34. Grihasutra (Gautama, Baudhayana, Apastamba)- Translations by Hermann Oldenberg (Primary texts describing the procedures of various Sanskaras)

35. Altekar, A.S.- The Position of Women in Hindu Civilization (Insight into marriage rituals and women's role in Vedic society)

36. Sharma, R.S.- India's Ancient Past (General background of social structure and practices)

37. Vatsyayan, Kapila-Traditions of Indian Folk Dance and Ritual (Interconnection of ritual and cultural expressions)

38. Pandey, Rajbali- Hindu Samskaras: Socio&Religious Study of the Hindu Sacraments